International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 25-01-2022, Accepted: 11-02-2022, Published: 28-02-2022
Volume 8, Issue 1, 2022, Page No. 52-53

रामचरितमानस हिन्दी साहित्य की एक अमूल्य धरोहर

अन्नू शर्मा[1], नवनीता भाटिया[2]
[1] शोध छात्रा, हिंदी विभाग, ओ. पी. जे. एस. विश्वविद्यालय, चुरु, राजस्थान भारत
[2] सह–आचार्या, हिंदी विभाग, ओ. पी. जे. एस. विश्वविद्यालय, चुरु, राजस्थान भारत

सारांश
जिस काल में 'रामचरितमानस' की रचना परम् पूज्य श्रद्धेय स्वामी तुलसीदासजी द्वारा की गयी थी, उस काल में तत्कालीन शासकों के अव्यवस्थित शासन–व्यवस्था एवं कट्टरता से राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं धार्मिक जीवन त्रस्त हो रहा था। चतुर्दिक उत्पीड़न व यातनाओं द्वारा समाज विकृत दशा को प्राप्त हो रहा था। समाज में हिन्दू सनातन धर्म में विकृतियाँ जोर पकड़ती जा रही थी। देशकाल व परिवेश के अनुसार ही हिन्दू समाज में नैतिक, चारित्रिक, बौद्धिक, आदर्श मानदण्डों का पतन होता जा रहा था। स्वामी तुलसीदास जी ने ऐसे समय में हिन्दू सनातन धर्म व भारतीय समाज में आदर्श मानदण्डों की पुनः स्थापना की बीड़ा अपने हाथों में लिया। उन्हें खेद था कि इस समय यदि हिन्दू समाज व धर्म के आदर्श मानदण्ड स्थापित नहीं किए गए तो इससे धर्म की जड़े हिल जायेगी।

मूल शब्दः रामचरितमानस, हिन्दी साहित्य, नैतिक, चारित्रिक, बौद्धिक

प्रस्तावना
जिस काल में 'रामचरितमानस' की रचना परम् पूज्य श्रद्धेय स्वामी तुलसीदासजी द्वारा की गयी थी, उस काल में तत्कालीन शासकों के अव्यवस्थित शासन–व्यवस्था एवं कट्टरता से राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं धार्मिक जीवन त्रस्त हो रहा था।
'मानस' के माध्यम से गोस्वामीजी ने 'श्रीराम' के चरित्र को अनन्त काल के लिए आदर्श के रूप में स्थापित कर दिया। यह श्रद्धेय तुलसीदास द्वारा समाज में स्थापित वह स्वर्णिम अमृत–कलश था जिसके प्रकाश से सम्पूर्ण विश्व लाभान्वित हुआ है और सदैव आगे भी होता रहेगा। मानस के मानदण्डों से हर वह समाज लाभान्वित हो सकता है, जो अपने समाज में एकता, अखण्डता, भाईचारा, सामाजिक चारित्रिक उत्थान, सभी वर्गों के साथ समान न्याय–व्यवस्था, अधर्मी को धर्म की राह चलने का मार्ग प्रशस्त करना चाहता है। वैदिक वर्ण–व्यवस्था के द्वारा सम्पूर्ण समाज का विभाजन कर्म आधारित ही था न कि जन्म आधारित। अतः कार्यों में बँटवारे के बाद भी, सभी में पारस्परिक स्नेह व महत्त्व स्थापित करने का प्रयास गोस्वामीजी ने किया है। मानस का प्रभाव एवं विषय–विस्तार व गूढ़ता देखकर मार्क्सवादी आलोचक डॉ. रामविलास शर्मा भी कहते हैं कि– "तुलसी को निकालकर हिन्दी साहित्य की परम्परा से सम्बन्ध जोड़ना असम्भव है। इस परम्परा में जो कुछ मूल्यवान है, जो कुछ महत्त्वपूर्ण है, जो कुछ सदा के लिए संग्रह करने योग्य है, वह तुलसी में सुरक्षित है, और बहुत बड़ी मात्रा में सुरक्षित है। यह तथ्य तुलसी की अपराजेय प्रतिभा का घोतक है कि उन्हें त्यागकर कोई भी युवा प्रवर्तक कवि हो नहीं सकता।"[1]
गोस्वामीजी वैयक्तिक स्तर पर एक विरक्त का जीवन जीते थे किन्तु चेतना के स्तर पर उनमें लोक के प्रति गहरी संसक्ति थी। गोस्वामीजी ने 'रामचरितमानस' की रचना में सभी जातियों, वर्गों, पशुओं–पक्षियों से सम्बद्ध समस्याओं और उनके समाधान को प्रस्तुत करते हैं। प्रकृति और मानव जो सदैव ही सहचरी रही है, उनका सम्बन्ध अत्यन्त पुराना है। शिशु, जब पहली बार अपने आँखे खोलता है तो वह सर्वप्रथम प्रकृति को ही निहारता है, उसी के आलिंगनपाश में चिर निद्रा में सोता है तथा इसके विभिन्न रहस्यों को आश्चर्य से देखता है। इसलिए प्राचीन भारतीय ग्रन्थों में प्रकृति और पर्यावरण के प्रति अत्यधिक संवेदनशीलता देखने को मिलती है।
हमारे ऋषियों, मुनियों ने प्राकृतिक शक्तियों को वन्दनीय एवं पूजनीय माना है। हमारे वेद, पुराण, उपनिषद व अन्य धर्मशास्त्रों में धरती व नदियों को 'माता' कहकर सम्बोधित किया गया है। माँ धरती हमारी सभी आवश्यकताओं को पूरा करती हैं। इसी प्रकार नदियाँ भी हमें जीवन की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण इकाई 'जल' प्रदान करती हैं। गंगा जो हिमालय के दक्षिण ढलानों से और विंध्याचल के उत्तरी ढलानों के कुछ हिस्सों में बहती है, भारत में अत्यन्त पवित्र मानी जाती है। इस समय 'गंगा' को संरक्षित करने के लिए अलग से मंत्रालय भी स्थापित कर दिया गया है। यह इस बात की ओर इंगित करता है कि नदियों का संरक्षण कितना आवश्यक है। हमने जल–प्रदूषण पर चर्चा करते समय यथा स्थिति को समझा था।
मानस में वर्णित वनों, जंगलों, वनस्पतियों का अध्ययन करें तो न जाने कितने औषधीय गुणों से युक्त वन सम्पदा को तुलसीदास ने अपनी सूक्ष्म दृष्टि से देखा, जाना और समझा होगा। चंदन, अगरू, आम, तुंग, केला, देवदारू, चम्पा, अशोक, पुन्नाग, कटहल, महुआ, असन, पारिजात, लोध्र, कदम्ब, छितवन, गूलर, अतिमुक्तक, मंदार कदली, प्रियंगु, धूलिकदम्ब, वकुल, जामुन, अनार, बेल, बंर, कोविदार, बरगद, कपास, धान आदि वृक्षों व वनस्पतियों के औषधीय महत्त्व को आज तो बिल्कुल नकारा नहीं जा सकता। आज भारत में प्राचीन आयुर्वेद द्वारा चिकित्सा कराना, लगभग सबकी इच्छा है। अनेक प्रयासों से इसे (आयुर्वेद) पुनर्स्थापित करने का प्रयास किया जा रहा है।

इस धरती पर प्रत्येक जीव का जीवित रहना परमावश्यक है, क्योंकि सभी एक–दूसरे पर प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से आश्रित रहते हैं। वनों के अतिरिक्त वन में रहने वाले जीवों को भी संरक्षण देना, हमारा परम कर्त्तव्य होता है। वन्य जीवों की उपयोगिता के कारण, इनका संरक्षण भारतीय संस्कृति का भी विशिष्ट अंग रहा है। इसी कारण लगभग हर एक देवता के साथ एक पशु अथवा पक्षी को उनकी सवारी मानी जाने की मान्यता रही है। यथा बैल शिव के साथ, सिंह दुर्गा के साथ, उल्लू लक्ष्मी के साथ, चूहा गणेश के साथ, मयूर कार्तिकेय के साथ पूजा जाता है। ईश्वर ने भी कई बार पशु के रूप में ही अवतार लिया यथा नरसिंह, मत्स्यावतार आदि। वन्य जीवों के प्रति हमारी श्रद्धा, जागरूकता, संवेदनशीलता व प्रेम के कारण ही उन्हें धर्म से भी जोड़ा गया, जिससे वे मात्र उपभोग की वस्तु बनकर न रह जाए। तुलसीदास ने मानस में विभिन्न पशु पक्षी को चित्रित किया है। अनेक पशु–पक्षी के महत्त्व व उसकी प्रकृति व आवास का वर्णन गोस्वामीजी ने अपनी चौपाइयों व दोहों में किया है। वर्तमान में जनसंख्या वृद्धि के कारण वन–क्षेत्र कम होते जा रहे हैं और वन्य जीव को कृत्रिम गृहों, चिड़ियाघरों में सुरक्षा प्रदान की जा रही है। मनुष्य को अपने प्राचीन साहित्य व समाज से वन्य–जीवों को संरक्षित करने की आवश्यकता को सीखना चाहिए। 'मानस' में तुलसीदास ने वानरों, भालू–रीछों की सेना से राक्षसों के युद्ध की घटना का वर्णन किया है। यह कितनी सुन्दर व्याख्या है समाज की, जहाँ पशु– पक्षियों को भी मनुष्य के साथ ही एक दूसरे का सहयोग करते हुए चित्रित किया गया है। यह वास्तव में तुलसी का अत्यन्त व्यापक विजिन था।

मनुष्य के नैतिक उत्थान व सांस्कृतिक चेतना के विकास में भी 'मानस' की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही। हमारे रीति–रिवाजों, खान–पान, धार्मिक विधान, चारित्रिक विकास, क्षमा, दया, उपकार, दान, सत्य वदन, निन्दा न करना, क्रोध का त्याग, धैर्य, परोपकार, जीव–हत्या का निषेध आदि अनेक वृत्तियों द्वारा मनुष्य के व्यक्तित्व का विकास करना भी 'तुलसीदास' के 'मानस' का उद्देश्य था। सम्बन्धों के आदर्श, पवित्रता, उत्तरदायित्व व धर्म की भी स्थापना तुलसी द्वारा मानस के माध्यम से की गई। अतः नैतिक व सांस्कृतिक संरक्षण के प्रति भी तुलसी जागरूक थे।

अहिल्या, शबरी, केवट, निषादराज जैसे सभी पात्र राम के निकटस्थ थे। नामवर सिंह रामराज्य की संकल्पना पर लिखते हैं कि–

राम के आदर्श राज्य में इस तरह को कोई जाति–पाति की बात नहीं है। एक ही आदर्श है– व्यक्ति। भक्ति की भूमि पर किसी जाति का या स्त्री–पुरुष का भी कोई भेद नहीं है। तुलसी जिस रामराज्य रूपी आदर्श की परिकल्पना करते हैं उस आदर्श परिकल्पना में लोग अपना–अपना कर्म करेंगे।" जिस प्रकार सामाजिक पर्यावरण व विचार को तुलसी ने परिकल्पना में निर्मित किया है, वह आज के युग में भी अनेक प्रसंगों में प्रगतिशील है।

प्राकृतिक सौन्दर्य से ओतप्रोत इस पवित्र गंगा में डुबकी लगाकर हम यह अवश्य जान लेते हैं कि जीवन का स्पन्दन प्रकृति, सुख और दुख की सहचरी प्रकृति, मानव के हृदय पटल और मस्तिष्क पटल पर इस तरह छाई हुई थी कि प्राकृतिक पर्यावरण को सम्मुन्नत बनाने के लिए उस समय कैसे विविध उपायों का प्रयोग किया जाता था। इस कवि ने अवसरानुकूल बरतूबी से वर्णन किया है। जैसे– वृक्षारोपण, उद्यान वाटिकाओं का रोपण, वनों की सुरक्षा, आश्रम भूमि का संरक्षण तथा जलीय स्रोतों को शुद्ध तथा स्वच्छ रखने के लिए किए जाने वाले उपाय प्रमुख थे। वातावरण को शान्त तथा सुखद बनाने हेतु लोगों के विचार भी तदनुसार ही होना आवश्यक था। जिससे वातावरण निरोगी, सुखप्रद, शान्तिमय और पावन बने।

निष्कर्ष यह है कि प्रकृति का प्रागंण इतना विशाल है कि षटपद्, चतुष्पद और द्विपद मानव भी इसी प्रकृति के प्रागंण में अठखेलियाँ करता हुआ अपने जीवन को सुचारू रूप से चलाता है। इस प्रकार समस्त सृष्टि से एवं विस्तृत प्रकृति का क्षेत्र असीमित है एवं सर्वत्र प्रसृत है।

सन्दर्भ सूची

1. ऋग्वेद, सायण भाष्य सहित, (सं) एफ. मैक्समूलर, वैदिक संशोधन मण्डल, पूना, (1933–51)
2. छान्दोग्य उपनिषद्, उपनिषद् निर्णयसागर प्रेस, बम्बई एवं गीताप्रेस, गोरखपुर
3. महाभारत, नीलकंठ की टीका सहित, गीता प्रेम, गोरखपुर
4. श्रीमद्भागवद्गीता, गीात–प्रेस, गोरखपुर, संवत् 2015
5. रामचरितमानस, तुलसीदास, गीताप्रेस, गोरखपुर, संवत् 2072
6. प्रो. अनंत सदाशिव अलतेकर, प्राचीन भारतीय शासन पद्धति विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, सं. 2001
7. प्रतिभा आर्य, महागाथा वृक्षों की, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा.लि., नई दिल्ली, सं. 1997
8. अनुपम मिश्र, आज भी खरे हैं तालाब, गांधी शांति प्रतिष्ठान, नई दिल्ली, प्रथम सं. 1993
9. बी.बी.एस. कपूर, भारतीय संस्कृति, धर्म एवं पर्यावरण संरक्षण, बीकानेर पब्लिकेशन्स, बीकानेर, सं. 2001
10. रामशरण शर्मा, प्राचीन भारत में राजनीतिक विचार एवं संस्थायें, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, दूसरा सं. 1990
11. विश्वनाथ त्रिपाठी, लोकवादी तुलसीदास, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा. लि., नई दिल्ली, पहला सं. 1974
12. रामविलास शर्मा, परम्परा का मूल्यांकन, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, सं. 2009
13. लक्ष्मण यादव, तुलसीदास आज के आलोचकों की नजर में (साक्षात्कार), स्वराज प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम सं. 2014